A National, Registered & Refereed Monthly Journal : Hindi Literature
Since March 2002
Research Link - 172, Vol - XVII (5), July - 2018, Page No. 52-54
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

# अनुभूति चित्रण की दृष्टि से समकालीन हिंदी आत्मकथा लेखिकाओं के प्रदेय का चित्रण

***प्रस्तुत शोधपत्र में अनुभूति चित्रण की दृष्टि से समकालीन हिंदी आत्मकथ लेखिकाओं के प्रदेय का चित्रण किया गया है। हिंदी महिला आत्मकथाकारों की प्रतिनिधि आत्मकथाओं में प्रेम की अभिव्यक्ति के विविध रुप के दिग्दर्शन होते हैं। ये आत्मकथाएँ लेखिकाओं की प्रेम उनकी असामान्यता और असाधारणा को सामने लाते हैं। समकालीन हिंदी महिला आत्मकथाओं में मुखरता के साथ स्त्री जीवन के संघर्षों का चित्रण हुआ है। इन आत्मकथाओं में लेखिकाएँ अपनी कथा के माध्यम से अपनी पीड़ा, आकांक्षा और संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए पितृसत्तात्मक समाज में एक स्त्री के साथ की गई ज्यादतियों की सच्चाइयों का पर्दाफाश कर अपनी मुक्ति की कामना करती हैं।***

**राजेन्द्र कुमार*, डॉ.वंदना कुमार** एवं डॉ.मधुलता बारा*****

साहित्य जीवनानुभूतियों की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति है। इसकी आत्मकथा विधा के माध्यम से इन जीवनानुभूतियों से प्रत्यक्षतः रूबरू होने का मौका मिलता है। हिंदी में महिला आत्मकथाओं का सर्वथा अभाव रहा है, जिसका सबसे बड़ा कारण सामाजिक दबाव है। किसी स्त्री के लिए अपने जीवन का सच उजागर करना आसान काम नहीं है, किन्तु समकालीन युग में हिंदी–आत्मकथा लेखन के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय नई प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। समकालीन दौर में महिलाओं ने आत्मकथा लिखकर साहित्य के क्षेत्र में भूचाल ला दिया है। इसे महिलाओं की साहित्यिक क्रॉंति कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। महिलाओं ने अपनी आत्मकथा के माध्यम से अपनी आप–बीती व जीवनानुभवों के आधार पर नारी जीवन की दयनीय दशा, नारियों पर हो रहे अन्यायों और अत्याचारों को चित्रित कर प्रबुद्ध समाज के समक्ष प्रस्तुत कर उन्हें सचेत करने का प्रयास किया है। ये आत्मकथाएँ समाज की पितृसत्तात्मक व्यवस्था की उन कुरूपताओं को सामने लाती हैं, जिसके कारण महिलाओं का जीवन बद से बदतर हो गया था। समाज की पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरूद्ध महिला आत्मकथाकारों के संघर्ष से यूरेनियम सदृश एक 'प्रकाश–पुँज' प्रस्फुटित हुआ, जिसे साहित्यिक भाषा में 'स्त्री–चेतना' के नाम से अभिहित किया गया। महिला आत्मकथाओं के अनुशीलन से 'स्त्री–चेतना' के विविध आयामों के दिग्दर्शन होते हैं, जो महिलाओं में अपने अस्तित्व, अस्मिता और आत्म–सम्मान की रक्षा के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा का संचार करते हैं।

व्यक्तित्व के विकास में बचपन का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। सभी समकालीन हिंदी महिला आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथाओं में बचपन से प्राप्त अनुभूतियों का चित्रण प्रमुखता से किया है। इन आत्मकथाओं के आधार पर स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि अधिकांश आत्मकथाकारों का बचपन उपेक्षा, तिरस्कार, अकेलेपन, भयाक्रॉंत से परिपूर्ण रहा है। कुसुमजी का बचपन अकेलेपन और उपेक्षा से आक्रांत रहा, क्योंकि उनके पिताजी व्यवसायिक कार्य में हमेशा व्यस्त रहते थे और सौतेली माँ का बर्ताव उनके प्रति दण्डात्मक रहता था। 13 वर्ष की उम्र में माता जी तथा 16 वर्ष की उम्र में पिता जी के निधन के कारण चंद्रकिरणजी का बचपन अनाथ हो गया था। प्रतिभाजी की षिक्षा में बहुत व्यवधान आया। बचपन में ही माँ के निधन हो जाने के कारण घरेलु कार्यों की जिम्मेदारी उनके कंधों पर आ पड़ी। फलतः छठी कक्षा के बाद उनकी पढ़ाई छूट गई। प्रभा जी का बचपन उपेक्षा और असुरक्षा से भयाक्रांत रहा। वे अनचाही, अनपेक्षित ऊपर से सातवीं संतान व पाँचवीं पुत्री के रूप में अवतरित हुईं थीं। तत्कालीन संकीर्णतावादी हिंदु सनातनी मारवाड़ी परिवार में पुत्री का जन्म किसी अभिशाप से कम न था। उनके पिताजी के असामयिक निधन से उनका बचपन अनाथ हो गया। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के तहत उनके परिवार में उनके बड़े भाई धन्नाराम का आधिपत्य हो गया। धन्नाराम जी उनका दैहिक शोषण करते थे। उन्होंने प्रभाजी द्वारा उनके कुकृत्य का विरोध करने पर उनकी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे फीस, जेब खर्च आदि पर पाबंदी लगा दी। इस प्रकार प्रभाजी का बालमन कुंठित हो गया था। इस प्रकार इसके अनुशीलन से यह सूत्र अनायास ही हाथ लग जाता है कि इन आत्मकथाकारों के द्वारा समाज के पितृ सत्तात्मक व्यवस्था के विरोध का मुख्य कारण इनका असामान्य बचपन रहा है।

किसी भी महिला के लिए दाम्पत्य जीवन उनके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा होता है। उनके जीवन का अधिकांश समय दाम्पत्य जीवन के रूप में ही व्यतीत होता है। यह उनके जीवन का ऐसा कालखण्ड होता है, जिसमें उन्हें अनेक उतार–चढ़ाव का

**शोधार्थी ( हिंदी ), साहित्य एवं भाषा अध्ययनशाला, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर ( छत्तीसगढ़ )*
***शोध-निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक ( हिन्दी विभाग ), शासकीय नागार्जुन स्नातकोत्तर विज्ञान महाविद्यालय, रायपुर ( छत्तीसगढ़ )*
****सह-शोध-निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक ( हिन्दी विभाग ), साहित्य एवं भाषा अध्ययनशाला, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर ( छत्तीसगढ़ )*

सामना करना पड़ता है। फलतः उनके द्वारा लिखित आत्मकथाओं में दाम्पत्य जीवन से प्राप्त अनुभूतियों का चित्रण प्रमुखता से हुआ है। इसके अवलोकन से इसमें व्यापक विविधता परिलक्षित होती है। इन आत्मकथाओं के आधार पर स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि अधिकांश महिलाओं का दाम्पत्य जीवन दुःखपूर्ण और कष्टकर रहा है। अपने पतियों की प्रताड़ना को समाज के सम्मुख लाने के लिए ही उन्होंने अपनी–अपनी आत्मकथाएँ लिखीं। समकालीन हिंदी महिला आत्मकथा लेखिकाओं जैसे–प्रतिभा अग्रवाल, कुसुम अंसल, कृष्णा अग्निहोत्री, मैत्रेयी पुष्पा, चंद्रकिरण सौनरेक्सा, सुनीता जैन, सुशीला टाकभौरे आदि ने अपने माता–पिता की पसंद से विवाह किया। उन्हें अपने दाम्पत्य जीवन में पति द्वारा प्रताड़ना का सामना करना पड़ा। कुछ आत्मकथा लेखिकाओं जैसे–कौसल्या बैसन्त्री, पद्मा सचदेव, कृष्णा अग्निहोत्री, शीला झुनझुनवाला, रमणिका गुप्ता, मन्नू भंडारी ने अंतरजातीय प्रेम विवाह किया फिर भी उन्हें अपने दाम्पत्य जीवन में पति द्वारा प्रताड़ना का सामना करना पड़ा। इस प्रकार इन आत्मकथाओं के अवलोकन से यह बात भी स्पष्ट होती है कि विवाह चाहे कि माता–पिता की पसंद से हो या अपनी पसंद अर्थात् प्रेम विवाह सफलता की गारंटी किसी में नहीं होती। समकालीन हिंदी महिला आत्मकथाओं के अवलोकन से एक बात और स्पष्ट होती है कि दाम्पत्य जीवन में प्रवेश के लिए विवाह के जितने तरीके हैं, उससे कहीं अधिक दाम्पत्य जीवन में विविधता है। किसी का वैवाहिक जीवन कुंठाग्रस्त है, जैसे–पद्मा सचदेव का, तो किसी का धनाभावग्रस्त जैसे–कौसल्या बैसंत्री, उन्हें अपने पति से भरण–पोषण की माँग के लिए अदालत का दरवाजा खटखटाना पड़ा। कोई अकेलेपन की मार झेल रही हैं जैसे–कुसुम अंसल, तो कोई पति की सामंती प्रवृत्ति से त्रस्त है, जैसे–चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, सुशीला टाकभौरे। कोई पति के व्यभिचारिता, लम्पटता से परेशान है जैसे–चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, कृष्णा अग्निहोत्री, तो कोई पति के व्यसनीयता से व्याकुल है, जैसे– पद्मा सचदेव, तो कोई पति की बेरोजगारी से व्यग्रित जैसे–चन्द्रकिरण सौनरेक्सा। फिर भी दाम्पत्य जीवन की गाड़ी अपने लक्ष्य की ओर बेरोक–टोक चलती रहती है। यह गाड़ी अनवरत, बिना रूके किसके कारण चलती है, सभी जानते हैं। यदि नहीं जानते तो इन नेत्रियों की आत्मकथाओं का अवलोकन किया जा सकता है। महिलाओं की सहनशीलता, जिजीविषा, धैर्य की धुरी पर ही दाम्पत्य जीवन टिका रहता है, नहीं तो मानव जीवन लुप्तप्राय हो जाता। समकालीन हिंदी आत्मकथा लेखिकाओं ने अपनी–अपनी आत्मकथाओं के जरिए पितृ सत्तात्मक समाज में व्याप्त 'लिंग–भेद' के मुद्दे को जोर–शोर से उठाया है। जिसके प्रभाव से साहित्य में 'लैंगिक विमर्श' का सूत्रपात हुआ। इन आत्मकथाओं के अनुशीलन से समाज की पुत्र संतानोत्पत्ति की लालसा स्पष्ट रूप से झलकती है। कौसल्या जी अपनी आत्मकथा 'दोहरा अभिषाप' के जरिए लिंग–भेद के मुद्दे को जोर–शोर से उठाती हैं। कौसल्या जी अपनी माँ की पुत्र प्राप्ति की लालसा एवं कन्या रत्न के तिरस्कार की मनोवृत्ति को भी अभिव्यक्त करते हुए लिखती हैं कि–''माँ हमेशा बाल धोते वक्त बड़बड़ाती रहती थीं–देवा, मैंने ऐसा कौन–सा पाप किया था कि मेरे नसीब में लड़कियाँ ही लिखी हैं?''[1] वे आगे कहती हैं कि "उसके बाद ग्यारहवीं संतान लड़की हुई। माँ बहुत उदास हो गई थीं। अब घर में छः लड़कियाँ और एक लड़का था। माँ कहती थीं कि जाओ इसे कुड़े में फेंक आओ।''[2] कौसल्या जी लिखती हैं कि ''हमें माँ–बाबा प्यार ज़रूर करते थे, हमें पढ़ाने में कोई कसर नहीं छोड़ी फिर भी लड़के का महत्त्व उनके लिए ज्यादा था। हमें वे पराया धन समझते थे।''[3] उसी प्रकार प्रभा जी अपनी आत्मकथा के माध्यम से समाज द्वारा लिंगी आधार पर उनके साथ किए गए भेदभाव, अत्याचार और नाइंसाफ़ी को जोर–शोर से उठाती हैं और स्त्री–पुरूष आधार पर असमानता का पुरजोर विरोध करते हुए बहस की माँग करती हैं। समाज की नज़रों में अनैतिक प्रेम–संबंध दोनों ने आपसी सहमति से स्थापित किए थे, किन्तु सजा केवल प्रभाजी को मिली। वे लिखती हैं कि–''हाँ, मैंने प्यार किया था, लेकिन प्यार के मीठेपन के साथ मुँह में बालू के कण भी किरकिराते रहे थे। कभी परिस्थितियों से लड़ पाती तो कभी उनके सामने घुटने टेकने पड़ते, डॉक्टर साहब तो दिन–प्रतिदिन अधिक–से–अधिक प्रतिष्ठित होते जा रहें हैं। मंच पर उन्हें माला पहनाई जाती है, कलकत्ता के वे शेरीफ़ भी चुने गए। किन्तु व्यापार एवं लेखन के कारण निरंतर संवर्धित होता हुआ मेरा व्यक्तित्व चीख–चीखकर पूछना चाहता–मुझ अकेले को ही यह सजा क्यों ? यह पीड़ा क्यों ? और क्यों है मेरे मन में यह विराट सूनापन ?''[4] शीला जी अपनी आत्मकथा 'कुछ कही कुछ अनकही' (2000) में समाज के लिंगभेदी मनोवृत्ति पर कटाक्ष करते हुए लिखती हैं कि–''लड़की होना मानो जंजीरों में जकड़े रहना। लड़के और लड़की एक रेखा के दो छोर–लड़कों पर सारा प्यार–दुलार लुटाया जाए, वह पढ़ें नहीं तो टीचर रखा जाए। मैं नहीं पढूँ तो किसी को कोई वास्ता नहीं। क्या फायदा ज्यादा पढ़–लिखकर। आखिर, मुझे तो चूल्हा ही झोंकना है। लड़कों की आवारागर्दी और सौ खून माफ और मुझे इन बंधनों में जकड़कर रखना कि यहाँ नहीं जाना, वहाँ नहीं जाना। इतनी रूकावटें कि दो कदम भी कहीं आगे बढ़े तो साथ में एक भाई को लेकर जाओ, चाहे वह उम्र में मुझसे दस साल छोटा ही क्यों न हो। समय पड़ने पर वह क्या मेरी रक्षा करेगा?''[5]

समकालीन हिंदी महिला आत्मकथाओं का मूलाधार प्रेमाभिव्यक्ति की अभिव्यंजना है। समकालीन हिंदी आत्मकथा लेखिकाओं ने अपनी–अपनी आत्मकथाओं में विपरीत लिंगी प्रेम–संबंधों से अर्जित अनुभूतियों का चित्रण विस्तार से किया है। वास्तव में आत्मकथा एक सत्याश्रित साहित्य है, जिसमें प्रेम–संबंधों के उद्घाटन को ईमानदारी के तराजू में तौला जाता है। पुरूष साहित्यकार अपने प्रेम–संबंधों का उद्घाटन जितना अधिक करता है, उतना ही विख्यात होता है और उनकी आत्मकथाएँ बाज़ारू भाषा में बेस्ट सेलर होती हैं, किन्तु यही कार्य यदि कोई महिला साहित्यकार करें, तो साहित्य जगत में ही नहीं समाज में भी उन्हें उलाहना का सामना करना पड़ता है और उन्हें कुलटा आदि छद्म नामों से अभिहित कर दिया जाता है। फिर भी कई महिला साहित्यकारों ने अपने प्रेम–संबंधों का उद्घाटन कर पुरूषों की छवि को युगपुरूष के रूप में प्रस्थापित किया है और कई महिला साहित्यकारों ने अपने प्रेम–संबंधों को उजागर कर समाज में छीपे नकाबपोश पुरूषों की दगाबाज़ी, विश्वासघाती और तामसी प्रवृत्ति की पोल खोल कर रख दी है।

हिंदी महिला साहित्यकारों की आत्मकथाओं में प्रेम की अभिव्यक्ति के विविध स्वरूप देखने को मिलते हैं। जहाँ कथा–लेखिका कृष्णा अग्निहोत्रीजी ने अपनी आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' (1997)

में अपने पति सत्यव्रत अग्निहोत्री जी की कामुकता, रसिकता, लम्पटता की पोल खोलने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। इस आप–बीती में कृष्णाजी पुरूषों को धोखेबाज़, बेईमान ठहराते हुए प्रेम करने के काबिल नहीं समझतीं। इसमें कृष्णा जी ने उनकी पढ़ाई में अभिरूचि देखकर अपने पति द्वारा उनके लिए ट्यूशन लगा देने, किन्तु बाद में उनके पढ़–लिखकर आत्मनिर्भर बनकर नियंत्रण से बाहर हो जाने की आशंका से विद्या अर्जन में अवरोध डालने का खुलासा कर पुरूषों के मनोभाव का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। इससे पुरूष सत्तात्मक व्यवस्था के तथाकथित पहरेदारों के अंतस् का डर और आशंका पहली बार बाहर आ सका है। वहीं हिंदी रंगमंच की नामचीन शख़्सियत डॉ. प्रतिभा अग्रवाल ने अपनी आप–बीती 'दस्तक ज़िंदगी की' (1990, अप्रस्तुत प्रकाशन, कोलकाता) में अपने पति मदन बाबू की छवि को एक हमसफ़र दोस्त, मार्गदर्षक के रूप में चित्रित करते हुए उनके गौरवपूर्ण स्मृतियों का जिक्र बार–बार किया है। जहाँ 'अन्या से अनन्या' (2007) आत्मकथा में स्त्री विमर्शकार प्रभा खेतानजी ने उनसे 18 वर्ष बड़े तथा पहले से शादीशुदा डॉ. गोपाल कृष्ण सर्राफ जी से अपने प्रेम को जायज़ ठहराकर वैवाहिक बंधनों का विरोध करते हुए परकीया भाव की स्थापना की। उन्होंने बड़ी ईमानदारी से डॉ. सर्राफ से अपने अवैध संबंधों को स्वीकार कर साहस का परिचय दिया है। वहीं शीला झुनझुनवालाजी की आत्मकथा 'कुछ कही कुछ अनकही' (2000, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली) में वैयक्तिक जीवन में एक मर्यादित प्रेम–प्रसंग के बाद ज़िंदगी की जद्दोजहद की अभिव्यक्ति की है। इसमें उन्होंने जहाँ राजस्व विभाग के अधिकारी रहे अपने पति टी.पी. झुनझुनवाला जी की छवि को एक मित्र, सखा, प्रियतम, पति, पथ–प्रदर्शक, गुरू के रूप में प्रतिस्थापित करते हुए उनके गौरवपूर्ण स्मृतियों का जिक्र बार–बार किया है। आँचलिक महिला उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पाजी ने अपनी आत्मकथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया' (2008) में अपने पति डॉ. रमेश चंद शर्मा जी से दिलचस्प एवं नाटकीय संबंधों को उजागर किया है, जो पत्नी की सफलताओं और यश को लेकर खुष, मगर उनके पुरूष संपर्कों को लेकर 'मालिक' की तरह सषंकित रहते हैं और उस पर पहरा लगाने का प्रयास करते हैं। पद्मा सचदेव और मन्नू भंडारी जी का प्रेमानुभव अलग फ़्लेवर लिए हुए है। दोनों की ज़िंदगी में प्रेम त्रिकोणात्मक रहा। पद्मा जी की ज़िंदगी में दो पुरूष आए, प्रख्यात डोगरी कवि वेदपाल दीप सहदेव और शास्त्रीय गायक सरदार सुरिन्दर सिंह। उन्होंने दोनों से अंतर्जातीय प्रेम–विवाह किया। दीप साहब से रूहानी प्रेम ने जहाँ उनकी ज़िंदगी को अवसाद से भर दिया, वहीं सुरिन्दर जी के प्रेम ने उनकी ज़िंदगी को आबाद कर दिया। वहीं मन्नू जी के पति प्रख्यात कथा–शिल्पी राजेन्द्र यादव जी ने दो महिलाओं से समानान्तर प्रेम–संबंध स्थापित किए, मन्नू जी और मीता जी। इसके परिणामस्वरूप मन्नू जी का दाम्पत्य जीवन अवसाद से भर गया। पद्मा और मन्नू जी दोनों ने अपनी–अपनी आत्मकथा क्रमशः 'बूँद बावड़ी' (1999, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली) तथा 'एक कहानी यह भी' (2007, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली) में इसके बारे में विस्तार से चित्रण किया है। दलित महिला आत्मकथाकार में कौसल्या जी ने जहाँ एक शादीशुदा व्यक्ति देवेन्द्र कुमार से अंतर्जातीय प्रेम विवाह किया वहीं सुशीला जी अपनी माता–पिता की पसंद से उनसे 20 वर्ष बड़ी आयु के व्यक्ति सुन्दरलाल टाकभौरे जी से विवाह कर उम्र के हिसाब से असामान्य विवाह के शिकंजे में फंसी। दोनों के पति सामंती पौरूषीय मानसिकता से ग्रसित थे। वे अपनी पत्नी को गुलाम, ताड़न के अधिकारी, पैरों की जूती और नौकर समझते थे। कौसल्या जी अपनी आत्मकथा में लिखती हैं–"देवेन्द्र कुमार को पत्नी सिर्फ खाना बनाने और उनकी शारीरिक भूख मिटाने के लिए चाहिए थी।"[6] अपनी वेदना को उद्घाटित करते हुए वे कहती हैं कि–"पत्नी को वह स्वतंत्रता सेनानी भी एक दासी के रूप में ही देखना चाहता था।"[7] सुशीला जी अपनी आत्मकथा में इस दर्द को व्यक्त करते हुए कहती हैं–''स्कूल से या बाहर से आने के बाद कभी–कभी टाकभौरे जी मेरे सामने पैर आगे बढ़ा देते। मेरा ध्यान न रहने पर हाथ से इशारा करके जूते उतारने के लिए कहते। मैं चुपचाप उनके पैरों के पास बैठकर जूते उतारती, मोजे उतारती।''[8] कथाकार चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने अपनी आत्मकथा 'पिंजरे की मैना' (2008, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली) में अपने शंकालु पति डिप्टी कलेक्टर कांतिचंद सौनरेक्सा की लंपटता, व्यभिचारिता, अव्यावहारिकता, उग्रता और कठोरता को बड़े साहस के साथ उकेरा है। इस आत्मकथा के अनुशीलन से पता चलता है कि तत्कालीन समय में दाम्पत्य जीवन महिलाओं की अद्भूत सहनशक्ति की नींव पर टिका रहता था।

इस प्रकार हिंदी महिला आत्मकथाकारों की प्रतिनिधि आत्मकथाओं में प्रेम की अभिव्यक्ति के विविध रूप के दिग्दर्शन होते हैं। ये आत्मकथाएँ लेखिकाओं की प्रेम उनकी 'असमान्यता' और 'असाधारणता' को सामने लाते हैं। किसी को अपने जीवनभर प्रेम में धोखा और सिर्फ धोखा मिला, जैसे कृष्णा अग्निहोत्री जी को। उन्होंने दो विवाह किए और दोनों से उन्हें धोखा मिला। किसी को एक से प्रेम में धोखा मिला तो दूसरे से प्रेम का सागर मिला, जैसे पद्मा सचदेव जी को। किसी लेखिका को अपने जीवन में पति रूप में एक मित्र, सखा, प्रियतम, पथ–प्रदर्शक, गुरू मिले, जैसे– प्रतिभा अग्रवाल और शीला झुनझुनवाला जी को; तो किसी लेखिका को पति के रूप में उच्च शिक्षित किन्तु शंकालु, लंपट, व्यभिचारी, अव्यावहारिक, उग्र और कठोर पुरूष मिला, जैसे कृष्णा अग्निहोत्री और चन्द्रकिरण सौनरेक्सा जी को। किसी लेखिका ने अंतर्जातीय प्रेम–विवाह किया जैसे– शीला झुनझुनवाला, पद्मा सचदेव और मन्नू भंडारी जी ने तो किसी ने अपने माता–पिता की पसंद से जैसे–प्रतिभा अग्रवाल, सुशीला टाकभौरे और मैत्रेयी पुष्पा जी, किन्तु सफलता की गारंटी किसी में भी नहीं थी।

निष्कर्षतः समकालीन हिंदी महिला आत्मकथाओं में मुखरता के साथ स्त्री–जीवन के संघर्षों का चित्रण हुआ है। इन आत्मकथाओं में लेखिकाएँ अपनी कथा के माध्यम से अपनी पीड़ा, आकांक्षा और संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए पितृसत्तात्मक समाज में एक स्त्री के साथ की गई ज़्यादतियों की सच्चाइयों का पर्दाफ़ाश कर अपनी मुक्ति की कामना की है।

***संदर्भ :***

*(1) बैसन्त्री, कौसल्या (2012) : दोहरा अभिशाप, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, पृ.सं. 11. **(2)** वही, पृ. सं. 51. **(3)** वही, पृ.सं. 51. **(4)** खेतान, प्रभा (2010) : अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण पहला, पृ. सं. 260. **(5)** झुनझुनवाला, शीला (2012) : कुछ कही कुछ अनकही, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 21–22. **(6)** वही, पृ. सं. 104. **(7)** वही, पृ. सं. 106. **(8)** टाकभौरे, सुशीला (2011) : शिकंजे का दर्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 103.*

❁❁

A National, Registered & Refereed Monthly Journal : Hindi Literature
Since March 2002
Research Link - 172, Vol - XVII (5), July - 2018, Page No. 55-56
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

# दलित विमर्श के चार दशक : 'नाच्यौ बहुत गोपाल' के संदर्भ में

*''नाच्यौ बहुत गोपाल'' उपन्यास में मोहना निर्गुनियाँ से प्रेम विवाह करता है, जबकि निर्गुनियाँ एक ब्राह्मणी है और मोहना एक मेहत्तर समाज से जुड़ा हुआ है। लेकिन निर्गुनियाँ मोहना को पाकर काम आसक्त की भावना से तृप्ति पाती है तथा उनसे एकनिष्ठ प्रेम करती है। उन्हें समाज के रीति-रिवाज, धर्म-कर्म, धार्मिक संस्कारों को अपना लेती है अर्थात् एक ब्राह्मणी से एक मेहत्तरानी का आश्रय धारण कर लेती है। प्रेम के अतिरिक्त अन्र्जातीय विवाह का कोई मजबूत आधार नहीं है। भारतीय समाज में आज भी प्रेम और प्रेम-विवाह की सर्वस्वीकार्यता नहीं है। रूढ़िग्रस्त समाज में पुरातन पंथी विचारों का ही बोलबाला है।*

**डॉ. सुरेन्द्र कुमार**

सूचना क्रान्ति ने 21वीं सदी के पहले दशक में ही दुनिया को बड़ी तेज गति से एक मंच पर ला दिया है। वैश्वीकरण की बाजारवादी ताकतों ने भी विज्ञान का खूब साथ निभाया है। साहित्य में वैश्वीकरण के विपरीत ध्रुवीकरण में तेजी आई है। समग्रः साहित्य में स्त्री–विमर्श और दलित विमर्श के ध्रुव बन गए हैं। दलित विमर्श के संबंध में भोगा हुआ यथार्थ और ओढ़ा हुआ यथार्थ तो धाराएं है। हिन्दी के विख्यात साहित्यकार अमृतलाल नागर ने 1978 में ''नाच्यौ बहुत गोपाल'' की रचना कर सवंदेना को एक सन्तुलित अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया था। उन्होंने अपने युग के सत्य को उनकी समस्त व्यापक सामाजिक संदर्भों में यथार्थ की चेतना के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

''नाच्यौ बहुत गोपाल'' में नागरजी ने मेहत्तर जीवन के घृणित एवं अमानवीय रूप, सिर पर मेल ढ़ोने की परम्परा के मूल में जाकर उसके सामाजिक कारणों का विश्लेषण किया है तथा इस मानवीय शोषण के विरूद्ध समतावादी मानवीय दृष्टि पर बल दिया है– ''हम आबरूदार है, खुद काम नहीं करते, बल्कि अपनी की तरह के दूसरे लोगों पर आतंक जमा कर उनसे करवाते हैं।''(1) निर्गुनियाँ इन ब्राह्मण कहलाने वाली सुवर्णों पर तीव्र कटाक्ष करती हैं– ''एह भाड़ में पाई ऐसी ब्राह्मणी।''

ब्राह्मण वर्ग ने ही मुझे कामवासना की तृप्ति की साधन बनाकर दलदल में गिरा दिया। उस ही ब्राह्मण वर्ग के प्रति आक्रोश इसलिए भी हैं, क्योंकि एक ओर तो यह ब्राह्मण वर्ग अछूतों की परछायी से भी दूर भागते हैं, तो दूसरी ओर रात के अंधेरे में दलित वर्ग की स्त्रियों के साथ अवैध संबंध बना कर अपना मुँह काला करते हैं। निर्गुनियाँ का पिता स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी प्रत्येक जाति की औरत से कामवासना संबंध स्थापित करने में पीछे नहीं रहे। इसलिए निर्गुनियाँ कहती हैं–''बड़े त्रिपुण्डधारी–पण्ड़ितों को मैंने अछूत स्त्रियों के पीछे–पीछे कुत्ते की तरह घूमते हुए बहुत देखा है। लुक–छिप कर मुँह काला करने के बाद फिर उजालें में मूँछों पर ताव देकर हटो बच्चों चिल्लाना शुरु कर देते हैं।''(2)

''नाच्यौ बहुत गोपाल'' और स्वाधीनता के छः दशक 1978 में लिखा यह उपन्यास स्वाधीनता के दो दशक बाद लिखा गया और 2008 में यह उपन्यास चार दशक पुराना हो चुका है। समय की गति के समानान्तर उपन्यास की मूल संवेदना यथावत है। दो दशक की आजादी को निर्गुनियाँ चुनौती देती है, तो उसकी चुनौती आज चार दशक बाद भी जस की तस है। निर्गुनियाँ अपने अनुभवों के बल पर वह कहती है–''मैंने तो नसीब की मार से मेहत्तरानी बन के; ये सीखा बाबूजी कि दुनिया में दो पुराने से पुराने गुलाम हैं, एक मेहत्तर और दूसरी औरत। जब तक ये गुलाम है; आपकी आजादी रुपये पूरे सौ के सौ नये पैसे भर झूठी हैं।''(3)

निर्गुनियाँ के ये निष्कर्ष बहुत ही खरे हैं। ब्राह्मणी से मेहत्तरानी बनी, निर्गुनियाँ निरन्तर अपना विकास करती है।

व्यक्ति का सतत् संघर्ष ही रोमांच पैदा करता है। संघर्ष में सकारात्मक दृष्टिकोण ही व्यक्ति को मंजिल तक ले जाता है। निर्गुनियाँ यही व्यक्त करती है– ''दयानंद सरस्वती के आन्दोलन और प्रचार से भारत–भूमि की नारियों का भाग्य सही अर्थों में पलटा है। आर्य समाज आन्दोलन तथा गाँधी जी के दलितों द्वारा आन्दोलन से नारी तथा दबी हुई जातियों की दशा में पर्याप्त सुधार हुआ।''(4) निर्गुनियाँ समाज में सुधार की ओर संकेत करती है कि अब तो यह अवश्य लगता है कि हमारे समाज में एक–एक आदमी में अपनी उन्नति करने की वह शक्ति और समझ अवश्य आ गई है। जो शायद पहले सैंकड़ों हजारों बरसों में भी नहीं थी।

*व्याख्याता ( हिन्दी विभाग ), विद्या सागर महिला महाविद्यालय, बस्सी, जयपुर ( राजस्थान )*

**अन्तर्जातीय विवाह :**

आज के युग में भी विवाह की परम्परागत धारणा में प्रगतिशील विचारों के प्रवेश से अन्तर्जातीय विवाह (प्रेम विवाह) की संख्या बढ़ती जा रही है। इसमें दहेज लेने–देने या अन्य औपचारिकताएं नहीं होती, यह विवाह तो दोनों युवा नर–नारी अपनी योग्यता और मिलन सारिता के आधार पर अपने आप कर लेते हैं। इसके फलस्वरूप समाज में फैल रहे गृह क्लेश तथा पति–पत्नी के बीच होने वाले सदा के द्वन्द्वों की भी समाप्ति हो जाती है। अपनी इच्छानुसार स्त्री–पुरूष का चुनाव पारस्परिक सौहार्द्रपूर्ण बन जाता है।

''नाच्यौ बहुत गोपाल'' उपन्यास में मोहना निर्गुनियाँ से प्रेम विवाह करता है, जबकि निर्गुनियाँ एक ब्राह्मणी है और मोहना एक मेहत्तर समाज से जुड़ा हुआ है। लेकिन निर्गुनियाँ मोहना को पाकर काम आसक्त की भावना से तृप्ति पाती है तथा उनसे एकनिष्ठ प्रेम करती है। उन्हें समाज के रीति–रिवाज, धर्म–कर्म, धार्मिक संस्कारों को अपना लेती है अर्थात् एक ब्राह्मणी से एक मेहत्तरानी का आश्रय धारण कर लेती है। प्रेम के अतिरिक्त अन्तर्जातीय विवाह का कोई मजबूत आधार नहीं है। भारतीय समाज में आज भी प्रेम और प्रेम–विवाह की सर्वस्वीकार्यता नहीं है। रूढ़िग्रस्त समाज में पुरातन पंथी विचारों का ही बोलबाला है।

समाज में कतिपय ऐसे मूल्य भी रहे हैं जो कि युगानुकूल परिवर्तित नहीं हो पाये और आज निरूपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, सती प्रथा, वेश्या समस्यां आदि सामाजिक बुराइयों को समय–समय पर समाज सुधारकों ने भी दूर करने का प्रयत्न किया है और इनके स्थान पर प्रगतिशील मूल्य पनप रहे हैं। दहेज एक सामाजिक बुराई है और सम्पूर्ण समाज में व्याप्त है। दलित वर्ग भी इससे अछूता नहीं है। दहेज का देश अन्ततः स्त्री को ही झेलना पड़ता है। ''नाच्यौं बहुत गोपाल'' में निर्गुनियाँ बिना दहेज के मोहना से शादी (प्रेम–विवाह) कर लेती है तो मोहना की माई खीज कर मोहना को धिक्कारती है कि तुमने बिना दहेज, बिना सलाह के प्रेम विवाह कर लिया। इसलिए माई ने कहा– ''तुझे इसीलिए पाल–पोस कर इत्ता बड़ा किया था, हरामी, हरजाई की औलाद। दहेज न लाने के कारण निर्गुनियाँ को शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना भोगनी पड़ती है।''(5)

वेश्यावृत्ति की समस्या :

नारी जीवन को यातनामय बनाने वाली, उसके जीवन को पंक में गिराने वाली समस्या है, ''वेश्यावृत्ति की समस्या''। नारी को वेश्या व्यवस्था को अपनाने के मूल आधार उसकी आर्थिक आधारहीनता है। संभवतः हमारी दूषित समाज व्यवस्था के कारण अनाथ–असहाय अधिकारों से वंचित व परिस्थितियों से विवश दुःखी नारी को जिजीविशा के लिए ही इस घृणित कार्य को करना पड़ता है।

''नाच्यौ बहुत गोपाल'' में निर्गुनियाँ को भी उनका पिता बटुक प्रसाद की रखैल बनाकर अपनी नौकरी पक्की करता है। बटुक प्रसाद ने निर्गुनियाँ के साथ काम वासना का संबंध करके उनकी कामवासना को तृप्ति करते हैं। अर्थात् सवर्ण वर्ग के लोग निर्गुनियाँ के शरीर को हर समय नोचते रहते हैं। उन्हें एक रण्ड़ी, वेश्या से बदत्तर बनाकर छोड़ देते है। आज भी स्त्री केवल पुरूषों की वासना की वजह से असुरक्षित है। आजादी के छः दशक बीतने पर भी कोई बड़ा बदलाव दिखाई नहीं देता।

***संदर्भ :***


*(1) धवल, डॉ. सुषमा (1968) : हिन्दी उपन्यास, सरस्वती मन्दिर, वाराणसी, पृष्ठ संख्या 60.*

***(2)** सिंह, प्रो. कुँवरपाल : हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना, पृष्ठ संख्या 45.*

***(3)** वर्मा, कान्ति : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, पृष्ठ संख्या 48.*

***(4)** नागर, अमृतलाल (1978) : नाच्यौ बहुत गोपाल, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 109.*

***(5)** पालीवाल, डॉ. शोभा : अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, पृष्ठ संख्या 68.*


❁❁


## शोध-पत्र प्रकाशन सम्बंधी सूचना

'रिसर्च लिंक' (राष्ट्रीय मासिक शोध जर्नल) में शोधपत्रों के प्रकाशन हेत किसी भी प्रकार का प्रकाशन शुल्क नहीं लिया जाता है। शोधपत्र प्रकाशन हेतु आप शोधपत्र की सॉफ्टकॉपी हमारे ई-मेल आईडी - researchlink@yahoo.co.in पर भेज सकते हैं। शोधपत्र प्राप्त होते ही रेफरी प्रकाशन हेतु स्वीकृत, अस्वीकृत अथवा संशोधन हेतु परामर्श प्रदान करता है। शोधपत्र प्रकाशन योग्य होने पर ही केवल शोधछात्रों, प्राध्यापकों से सदस्यता शुल्क लिया जाता है। सदस्यता शुल्क का भुगतान ऑन-लाईन हमारे खाते में सीधे किया जा सकता है। बैंक सम्बंधी जानकारी निम्नानुसार है -

**बैंक :** स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया
**ब्रांच :** ओल्ड पलासिया, इन्दौर,
**कोड** - **SBIN 000 3432**
**खाते का नाम : रिसर्च लिंक,**
**खाता नंबर** - **63025612815**

भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र एवं सीडी के साथ कार्यालयीन पते पर भेजना अनिवार्य है।